14 सितंबर 2015

आहार और विचार पर प्रतिबंध के बीच पिसती आज़ादी

–राम पुनियानी

असहिष्णुता कभी सामाजिक जीवन के किसी एक क्षेत्र में सीमित नहीं रहती बल्कि विभिन्न क्षेत्रों में समानांतर रूप से फैलती है। महाराष्ट्र में सत्ता में बैठी भाजपा के बहुमत वाली सरकार ने कुछ महीनों पहले बीफ बेचने और खाने पर प्रतिबंध लगाया था। इस फैसले ने मांस उद्योग से जुड़े कामगारों के सामने रोजगार का संकट पैदा कर दिया। मुंबई के सबसे बड़े देवनार बूचड़खाने के कामगार बेरोजगारी की मार से छटपटा रहे हैं।

इसके बाद महाराष्ट्र सरकार का एक और फरमान आया कि सरकार या जनप्रतिनिधि की आलोचना, देशद्रोह समझा जाएगा। यह अभिव्यक्ति की आज़ादी, असहमति के स्वर और बुनियादी लोकतांत्रिक अधिकारों पर पूरी तरह अंकुश लगाने की कोशिश है। इससे पहले महाराष्ट्र में अंधविश्वास को चुनौती और वैज्ञानिक दृष्टिकोण को बढ़ावा देने वाले दो प्रमुख बुद्धिजीवी और विचारक डॉ. नरेंद्र दाभोलकर और कामरेड गोविंद पंसारे (जो एक राजनैतिक कार्यकर्ता भी थे) की हत्याएं हो चुकी हैं। पड़ोस के कर्नाटक में हम्पी की कन्नड़ यूनिवर्सिटी के पूर्व कुलपति और प्रख्यात विद्वान डॉक्टर कलबुर्गी को भी मौत के घाट उतारा जा चुका है।

इसी बीच, मीरा भयंदर म्युनिसिपल कॉरपोरेशन ने आठ दिनों के जैन पर्व पर्यूषण के दौरान अंडा व मछली को छोड़कर, मांसाहारी खाने पर प्रतिबंध लगाने का फैसला किया है। मुंबई कॉरपोरेशन के तहत आने वाले मुंबई के इलाकों में यह प्रतिबंध चार दिन रहेगा। इस फैसले के पीछे भाजपा की अहम भूमिका है। देश और महाराष्ट्र में सांप्रदायिक राजनीति के उभार के साथ–साथ प्रतिबंध वाले दिनों की संख्या बढ़ती गई है। पहले 60 के दशक में पर्यूषण के दौरान मांसाहारी खाने पर एक दिन का प्रतिबंध रहता था जो 90 के दशक में बढ़कर दो दिन का हो गया। अब मुंबई में यह चार दिन और मीरा रोड–भयंदर इलाके में आठ दिनों का है। दिलचस्प बात यह है कि अंड़ा और मछली, जिन्हें भी जैन नहीं खाते, कट्टरपंथियों के कोप से बरी हैं। ये कट्टरपंथी अपनी भावनाएं दूसरों पर थोपने को ही अपना सबसे बड़ा धर्म समझते हैं। क्या अगला प्रतिबंध हम लहसुन और प्याज पर लगाने जा रहे हैं? इनसे भी तो जैन समुदाय के लोग परहेज करते हैं।

वैसे यह पूरा देश ही प्रभावशाली ताकतों की खानपान से जुड़े रूढ़िवाद का शिकार रहा है। मुंबई में ऐसी हाउसिंग सोसाइटी हैं जहां मांसाहारी लोगों को रहने की अनुमति नहीं है। गुजरात के अहमदाबाद में तो एक बड़ी दिलचस्प चीज नजर आई। मैं एक दोस्त के यहां ठहरा था जो किराए के मकान में रहते थे। अचानक, एक सुबह जब हम चाय पी रहे थे, मकान–मालिक आया और सीधे किचन में घुस गया। कुछ देर बाद वह वहां से चला गया। मैं हैरान रह गया। मेरे मित्र ने मुझे समझाया कि यह औचक किचन निरीक्षण था, यह देखने के लिए कि कहीं नॉन–वेज तो खाया या पकाया नहीं जा रहा है। आपको मालूम होगा कि खाड़ी के कई देशों में, जहां इस्लाम के नाम पर शेख तानाशाही चलाते हैं, रमजान के दिनों में एक तरह का फूड–कर्फ्यू लग जाता है। गैर मुसलमानों या उन मुसलमानों जो रोज़े नहीं रखते के लिए खाना जुटाना मुश्किल हो जाता है। लेकिन विविधता वाले समाज में किस समुदाय की भावनाओं का दबदबा कायम रहेगा, यह एक जटिल प्रश्न है। मिसाल के तौर पर भारत में रमजान के दौरान शराब पर पाबंदी नहीं है।

हमारे जैसे विविधता वाले समाज में खानपान की आदतों को कैसे नियंत्रित किया जा सकता है? पहले भी कई राजा अल्पसंख्यकों की भावनाओं का आदर करते थे। जब जैन प्रतिनिधियों ने अकबर से गुहार लगाई तो कुछ समय के लिए मांसाहारी भोजन पर प्रतिबंध लगाया गया था। बाबर ने तो

अपनी वसीयत में बेटे हुमायूं को यह निर्देश दिया था कि हिंदू भावनाओं का ख्याल रखते हुए गौवध की इजाजत न दी जाए। जाहिर है, हर धर्म की बुनियादी सीख यही होती है कि समाज में दूसरे लोगों की भावनाओं का आदर किया जाए। लेकिन क्या ये बातें धर्मों को मानने वाले लोग अपने जीवन में उतार पाते हैं? अपनी पसंद–नापसंद दूसरों पर थोपना तो सामाजिक दबंगई का प्रतीक है। सांप्रदायिक पार्टियां अपने वोट बैंक को बचाने और सामाजिक–राजनैतिक एजेंडे को लागू करने के लिए यह मानकर चलती हैं कि उन्हें ऐसा करने से कोई नहीं रोक सकता।

एक लोकतांत्रिक समाज किस तरह से चलना चाहिए, एक स्तर पर यह काफी पेचीदा सवाल है। होना तो यह चाहिए कि लोग एक–दूसरे की भावनाओं का सम्मान करें। इस तरह की पाबंदियां अपनी मर्जी से लागू होनी चाहिए। यही तो महात्मा गांधी ने बार–बार हमको सिखाया। चाहे धार्मिक प्रथा हो या खानपान की आदत, उनकी राह स्पष्ट थी। बगैर दूसरों पर थोपे, अपनी राह चलो क्योंकि अपने विचार दूसरों पर थोपना, आला दर्जे की हिंसा है। गौमांस सेवन के बारे में गांधी ने लिखा है, मेरा मानना है कि अगर मुस्लिम चाहते हैं तो उन्हें गौवध की पूरी आज़ादी होनी चाहिए बशर्ते साफ–सफाई का पूरा ध्यान रखा जाए और इस प्रकार कि पड़ोसी हिंदुओं की भावनाओं को आघात न पहुंचे। मुस्लिमों की गौवध की स्वतंत्रता को पूरी तरह स्वीकार करना, सांप्रदायिक सद्भाव के लिए अपरिहार्य है और यही गाय को बचाने का एकमात्र रास्ता है।

अरुणाचल प्रदेश से केरल और पंजाब से गुजरात तक, हमारे देश में खानपान की विविध और समृद्ध परंपरा है। संप्रदायवाद और हिंदू धर्म के नाम पर राजनीति के उभार के साथ ही असहिष्णुता बढ़ रही है। मांस बिक्री पर रोक लगाने वाला जैन नेतृत्व का यह वर्ग भाजपा के करीब है। हमारे सामाजिक–सांस्कृतिक जीवन के सभी क्षेत्रों के लिए भाजपा के पास एक एजेंडा है। बीफ पर प्रतिबंध, विभाजनकारी राजनीति को धार देने की एक सोची–समझी साजिश है, जिससे समुदायों के बीच धुव्रीकरण तेज होता है। सन 1946 में बनी वी. शांताराम की फिल्म पड़ोसी याद कीजिए। दो हिंदू–मुस्लिम पड़ोसी एक–दूसरे की भावनाओं का सम्मान करते हैं। पुराने समय के ऐसे तमाम किस्से–कहानियां हैं जब समुदायों के बीच सौहार्द था एक–दूसरे की रस्मों–रिवाजों को मनाया जाता था न कि सिर्फ बर्दाश्त किया जाता था। हरेक स्तर इसी सम्मिश्रण ने हमें विविधतापूर्ण और बहुलतावादी विरासत दी है। देश में विविधता का जश्न मनाने की संस्कृति ऐसी ही बनी।

लेकिन प्रतिबंध से जुड़े मुद्दे अब खाड़ी देशों में इस्लामिक और भारत में हिंदुत्व पहचान की राजनीति का अनिवार्य अंग बन गए हैं। दुखद है कि हमारा लोकतांत्रिक समाज इसमें जकड़ता चला जा रहा है। पिछले एक साल से यह दमघोंटू रवैया हमारी लोकतांत्रिक आज़ादी की बेड़ियाँ बनता जा रहा है। यह आगे बढ़ने के बजाय पीछे लौटने की तरह है। क्या हम एक ऐसा देश बनना चाहते हैं जहाँ धर्म के नाम पर आज़ादी को दफन किया जाता है। ***(लेखक आई.आई.टी. मुंबई में पढ़ाते थे और सन् 2007 के नेशनल कम्यूनल हार्मोनी एवार्ड से सम्मानित हैं।)***

संपादक महोदय,

कृपया इस सम–सामयिक लेख को अपने प्रकाशन में स्थान देने की कृपा करें।

–एल. एस. हरदेनिया